निखिलेषु अवस्थासु जीवन्मुक्तः स उच्यते। नित्य कृष्णभावनाभावित कर्म के परायण रहने वाला भगवद्भक्त स्वतः मुक्त हो जाता है। 'नारद पञ्चरात्र' द्वारा यह अनुमोदित है—

दिवकालाद्यनवच्छिन्ने कृष्णे चेतो विधाय च।
तन्मयो भवति क्षिप्रं जीवो ब्रह्मणि योजयेत्।।

'श्रीकृष्ण के देशकाल से अतीत सर्वव्यापक श्रीविग्रह पर ध्यान एकाग्र करने से उनके चिन्तन में विभोरता होती है और फिर श्रीकृष्ण की दिव्य संनिधि रूपी सुखावस्था प्राप्त हो जाती है।'

कृष्णभावनामृत योगाभ्यास द्वारा प्राप्त समाधि की परम अवस्था है। श्रीकृष्ण का परमात्मा रूप से प्राणीमात्र के हृदय में वास है— केवल इतना जानने मात्र से योगी सब प्रकार के दोषों से मुक्त हो जाता है। वेद श्रीभगवान् की इस अचिन्त्य शक्ति का समर्थन करते है:

एकोऽपि सन् बहुधा योऽवभाति।
ऐश्वर्याद्रूपमेकं च सूर्यवद् बहुधेयते।।

'अद्वितीय होने के साथ श्रीविष्णु निःसन्देह सर्वव्यापक भी हैं। अपनी अचिन्त्य शक्ति के द्वारा एक विग्रह से भी वे सर्वत्र विद्यमान हैं। सूर्य के समान अनेक स्थलों में एक ही काल में प्रकट हैं।'

आत्मौपम्येन सर्वत्र समं पश्यति योऽर्जुन।
सुखं वा यदि वा दुःखं स योगी परमो मतः।।३२।।

आत्म-औपम्येन=आत्मा के समान; **सर्वत्र**=सब में; **समम्**=समतापूर्वक, **पश्यति**=देखता है; **यः**=जो; **अर्जुन**=हे अर्जुन; **सुखम्**=सुख; **वा**=अथवा; **यदि**=यदि; **वा**=अथवा; **दुःखम्**=क्लेश; **सः**=वह; **योगी**=योगी; **परमः**=परमश्रेष्ठ; **मतः**=माना गया है।

अनुवाद

हे अर्जुन! वह योगी परमश्रेष्ठ है जो अपनी आत्मा की उपमा से सुख-दुःख की प्राप्ति में सब प्राणियों को समान देखता है।।३२।।

तात्पर्य

जो कृष्णभावनाभावित है वह परम योगी है। अपने निजी अनुभव के आधार पर उसे प्राणीमात्र के सुख-दुःख का बोध रहता है। जीव के क्लेशों का कारण भगवान् श्रीकृष्ण से अपने सम्बन्ध को भुला देना है। दूसरी ओर, श्रीकृष्ण को मानवीय क्रियाओं का परम भोक्ता मानना सुख का हेतु है। एकमात्र श्रीकृष्ण संपूर्ण भूमि और लोकों के सार्वभौम अधिपति हैं—ऐसा जानने वाला पूर्ण योगी जीवमात्र का परम सुहृद् है। वह जानता है कि श्रीकृष्ण से अपने नित्य सम्बन्ध को भूल जाने के कारण जीवात्मा माया के गुणों में बँधता है और इसी कारण उसे त्रिविध क्लेशों की प्राप्ति होती है।